B.A Part I Paper II

# रघुवंश महाकाव्य (कालिदास)

(क)(ख) Paper II खण्ड, द्वितीय पत्र

## अनिवार्य प्रश्न (क)(ख)

प्रश्न:- रघुवंश महाकाव्य के आधार पर कालिदास की समीक्षा कीजिये अथवा कुमार-संभव के आधार कालिदास के उपमा वैशिष्ट्य का प्रतिपादन करें (60)

उत्तरम् :- संस्कृत साहित्य में महाकवि कालिदास का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। इन्होंने अपने जीवन काल में सात ग्रन्थों की रचना की यथा- ऋतुसंहारम्, मेघदूतम्, मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीयम्, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, कुमारसंभवम् तथा रघुवंशम्। इनमें से रघुवंशम् तथा कुमार संभवम् दोनों महाकाव्य हैं।

महाकवि कालिदास निर्विवाद रूप से उपमा के सम्राट माने जाते हैं। आलोचकों ने जब संस्कृत के महान कवियों के रचनाओं को [illegible] किया तो कालिदास सबसे आगे रहे। उसके आगे रहने का एक कारण उपमा को माना जा सकता है। उपमा के सन्दर्भ में समीक्षकों का कहना है-

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयोगुणाः॥

रघुवंशम् एक महाकाव्य है। इसमें 19 सर्ग हैं तथा रघुकुल के सभी राजाओं का वर्णन बड़े ही अलंकृत शैली में किया है। कहा जाता है कि कालिदास ने कुमारसंभवम् में शिव और पार्वती के वर्णन क्रम में स्त्री-पुरुषोचित मान-मर्यादा को ताक पर रख दिया, और बड़े ही धृष्टता पूर्वक पार्वती का शिव के साथ समागम का वर्णन कर देता है। फलतः पार्वती ने



Scanned with CamScanner

कालिदास को शाप दे दिया, जिससे कालिदास को कुष्टरोग हो गया। कालिदास शिव जी के शरण में गये, तब शिव जी ने कहा कि तुम अपने इस रोग निवारण के लिए रघुवंश का वर्णन करो, इसी क्रम में इस ग्रन्थ का श्रीगणेश होता है और सर्वप्रथम उसी शिव और पार्वती को सर्वस्व मानकर अपने आप को समर्पित करते हैं-

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥

जो महान आदमी होते हैं वे अपनी महानता को स्वयं नहीं प्रकट करते हैं अपितु अपने आप को सदा छोटा और तुच्छ मानते हैं। कालिदास स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि कहाँ सूर्यकुल में उत्पन्न वंश और कहाँ मैं तुच्छ बुद्धि। जिस प्रकार छोटी नौका से विशाल सागर को पार नहीं किया जा सकता है। ठीक उसी प्रकार छोटी सी बुद्धि से विशाल रघुवंश का वर्णन भी नहीं कर पाऊँगा-

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्॥

प्रथमसर्ग में राजा दिलीप के द्वारा नन्दिनी सेवा, द्वितीयसर्ग में नन्दिनी दिलीप की इच्छा को पूर्ण करती है। षष्ठ सर्ग में स्वयंवर का ऐसा चित्र खींचा की सभी विद्वत् जन इस चित्र को देखकर दंग रह गये - राजकुमारी इन्दुमती पुष्प-हार लेकर आगे बढ़ रही है, पीछे छुटे हुए राजा उसी तरह मुरझाये हुए फूल के समान दिखाई दे रहे हैं-

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ,
यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे,
विवर्णभावं स स भूमिपालः॥ [illegible]

PANINI CLASSES

इस तरह सम्पूर्ण रघुवंशम् में कवि ने अपने सूक्ष्म कल्पनाओं का प्रयोग कर महाकाव्य को सरस बनाने का प्रयास किया है।

कालिदास की दूसरी महत्वपूर्ण रचना कुमारसंभव है। यह सत्रह सर्गों में विभक्त एक महाकाव्य है। इसमें कुमार कार्तिकेय की उत्पत्ति का वर्णन है परन्तु इस महाकाव्य के प्रारंभ में ही कवि ने जिस तरह भारतवर्ष के भौगोलिक पृष्ठभूमि का खाका तैयार किया है, वह सचमुच सराहनीय है -

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा -
हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य
स्थितः पृथिव्याः इव मानदण्डः॥

इस महाकाव्य में कालिदास ने विशुद्ध प्रेम की प्रतिष्ठा को स्थापित किया है। प्रेम ही एक ऐसी चीज है जो किसी के आकर्षण बिन्दु का केन्द्र बना जाता है चाहे वह प्रेम भौतिक हो या आध्यात्मिक। कालिदास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे भौतिक प्रेम का तादात्म्य आध्यात्मिक प्रेम के साथ करते हैं। भगवान् शिव आध्यात्मिक सौन्दर्य के प्रतिमान हैं। उन्हें शारीरिक सौन्दर्य आकृष्ट नहीं कर सकता है। हिमालयपुत्री पार्वती अपने रूप सौन्दर्य से शिव को आकृष्ट नहीं कर पाती है, अतः उसकी सुन्दरता बेकार है। कालिदास का मानना है कि सुन्दरता वही है जो अपने प्रियतम को आकृष्ट कर सके -

"प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता।"

इसी ग्रन्थ में आगे कहा गया है कि संसार में जितने भी धर्म प्राप्ति के साधन हैं - उन साधनों में शरीर धर्म का पहला साधन है।

कुमारसंभव के पञ्चमसर्ग में कवि कहते हैं -
"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।"

इसी कठिन तपस्या रूपी साधन से पार्वती ने शिव जी को प्राप्त किया क्योंकि शिव जी ने पार्वती के सामने ही अपने त्रिनेत्र से कामदेव को भस्म कर दिया था, फलतः एकमात्र उपाय तप ही बचा था। पार्वती अपने शारीरिक सौन्दर्य को तपस्या की ज्वाला में संतप्त कर देती हैं, तभी उसके शरीर से अलौकिक सौन्दर्य का स्फुरण होता है, यही अलौकिक सौन्दर्य आध्यात्मिक प्रेम का निशानी है, अततः यह प्रेम इतना ऊपर उठ जाता है कि शिव जी अपने को दास-स्वरूप समझने लगते हैं -

"अद्यप्रभृत्यवनताङ्गि तवास्मि दासः।"

कुमारसंभवम् में प्रेम और तपस्या का बड़ा ही सुन्दर निरूपण हुआ है। संसार की हित की कामना से ही महाकवि ने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया -

कुमारसम्भवे प्रीतिस्तपश्चापि प्रतिष्ठितम् ।
लोकहितकामनया लोकस्य कविना कृतम् ॥

इस तरह हम देखते हैं कि ये दोनों ही महाकाव्य महाकवि कालिदास के काव्य कला का सुन्दर उदाहरण है। सर्वत्र कवि की सूक्ष्म प्रतिभा दृष्टिगोचर होती है। वैसे भी कालिदास की अमर लेखनी से न केवल ये दोनों महाकाव्य ही धन्य हुए अपितु आज सम्पूर्ण संस्कृत जगत् कालिदास से धन्य है, अतः कालिदास सर्वों का विलास है -

"भासो हासो कविकुलगुरुः -
कालिदासो विलासः ।"

PANINI CLASSES

# भारवि कृत किरातार्जुनीयम् प्रथम सर्ग

## द्वितीय पत्र, खण्ड (क) अनिवार्य प्रश्न (ग)

Paper (II)

प्रश्न:- भारवेरर्थगौरवम् की समीक्षा कीजिये अथवा भारवि की भाषा शैली की समीक्षा करें। or "नारिकेलफलं सम्मितं वचो भारवेः" की समीक्षा करें।

उत्तर:- महाकवि भारवि संस्कृत साहित्य के महान् कवि है। भारवि की एकमात्र रचना किरातार्जुनीयम् है। किरातार्जुनीयम् 18 सर्गों में विभक्त है। इस महाकाव्य में किरातवेशधारी भगवान् शिव तथा पाण्डव सम्राट् अर्जुन का चरित्र चित्रण किया गया है। किरातार्जुनीयम् की व्युत्पत्ति इस प्रकार है-

"किरातश्च अर्जुनश्च = किरातार्जुनौ ; तौ अधिकृत्य कृतं काव्यं किरातार्जुनीयम् ।"

यहाँ किरातार्जुन शब्द में भव अर्थ में छ प्रत्यय लगने पर किरातार्जुनीयम् बनता है। भव का अर्थ है होना अर्थात् किरात और अर्जुन के घटनाओं का वर्णन जिस काव्य में हो वह किरातार्जुनीयम् कहलाता है। इसकी गणना बृहत्त्रयी के अन्तर्गत की जाती है। यह महाकाव्य वीररस प्रधान है। यद्यपि शृंगार रस का भी वर्णन बीच-बीच में हुआ है, फिर भी सम्पूर्णता की दृष्टि से यह महाकाव्य वीररस ही प्रधान है। भारवि के सन्दर्भ में एक कथन प्रसिद्ध है-

"भारवेरर्थगौरवम् ।"

भारवि का अर्थगौरव अत्यधिक प्रसिद्ध है। अर्थगाम्भीर्य सबके वश की बात नहीं है, कवि की विद्वता अर्थगौरव से ही ज्ञात →

होता है। थोड़े से शब्दों में विशाल अर्थ का सन्निवेश करना ही अर्थगौरव है। महाकवि भारवि के महाकाव्य में यह अर्थगौरव पदे पदे लक्षित होता है। ग्रन्थ के आरंभ से लेकर अंत तक अर्थगौरव की छटा दिखाई देती है—

" कृतप्रणामस्य महीं महीभुजे
जितां सपत्नेन निवेदयिष्यतः।
न विव्यथे तस्य मनो न हि
प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः॥"

यहाँ वनेचर के माध्यम से चमत्कारपूर्ण अर्थ का प्रदर्शन किया गया है। वनेचर कहता है कि हितैषी को प्रिय मिथ्या कभी नहीं बोलना चाहिए क्योंकि मिथ्या मिथ्या ही है और सत्य सत्य ही है। झूठ और सत्य कहने से शत्रु की स्थिति परिवर्तन नहीं हो सकता, फलतः अपने स्वामी से असत्य प्रिय नहीं कहना चाहिए।

महाकवि भारवि ने अपनी काव्यशैली का परिचय विभिन्न अलंकारों के माध्यम से दिया है। विशेष रूप से कवि का प्रिय अलंकार अर्थान्तरन्यास है। अर्थान्तरन्यास अलंकार का उदाहरण देते हुए कवि कहते हैं—

" क्रियासु युक्तैर्नृप चारचक्षुषो
न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः।
अतोऽर्हसि क्षन्तुमसाधु साधु वा
हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः॥"

हितकर वाणी और प्रिय वाणी संसार में दुर्लभ है। महाकवि भारवि के महाकाव्य में जो पदार्थ है, वह स्वतः स्फुट नहीं है-

बाहर से देखने पर तो लगता है निरर्थक बकवास है परन्तु पदच्छेद करने पर जो अर्थ-चमत्कार दिखाई पड़ता है वह अन्यत्र दुर्लभ है और कहीं-कहीं तो श्लेष अलंकार के प्रयोग से काव्य इतना क्लिष्ट हो गया है कि मल्लिनाथ भी नहीं समझ पाते हैं, और कहते हैं -

"नारिकेलफलसम्मितं वचो भारवेः।"

सूक्ति का भावार्थ है नारियल फल जैसे ऊपर से देखने में बेढंगा लगता है परन्तु उसे कायदे से तोड़कर गीरी गोला निकाल लिया जाय तो वह मधुर-स्वादिष्ट खाने में लगता है उसी प्रकार भारवि के काव्य की भाषा शैली है।

★ महाकवि भारवि की सबसे बड़ी विशेषता है कि वे बड़े से बड़े अर्थ को थोड़े से शब्दों के द्वारा प्रकट कर देता है। भीम के भाषण की प्रशंसा युधिष्ठिर के शब्दों में कवि ने उपन्यस्त किया है -

"स्फुटता न पदैरपाकृता न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्।
रचिता पृथगर्थता गिरां न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित्॥"

महाकवि भारवि वैदर्भी रीति के पक्षाचार्य माने जाते हैं। इनकी शैली ओजपूर्ण तथा अर्थगाम्भीर्य से परिपूर्ण है। इसे कला-पक्ष-प्रधान शैली भी कहा जाता है।

भारवि राजनीति के प्रकाण्ड पंडित हैं। इनके राजनीतिक विषयों से सम्बन्धित प्रश्न अत्यन्त गूढ़ हैं।

किरातार्जुनीयम् को नीतिशास्त्र का आकर-ग्रन्थ कहा जाता है। पूरा का पूरा महाकाव्य राजनीति ज्ञान से ओत-प्रोत है। दुर्योधन की नीति है-

"वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः।"

कोई व्यक्ति जब ऐश्वर्य को बढ़ा रहा हो उस समय यदि महात्मा उसमें यानी ऐश्वर्य वृद्धि में अवरोध पैदा करें तब उसके साथ विरोध ही श्रेष्ठ है।

भारवि ने अपने पात्रों का [illegible] बड़ी सूक्ष्मता से किया है। [illegible] के अनुरूप भाषा का प्रयोग उचित प्रतीत [illegible] है। युधिष्ठिर के कथन में कवि अत्यधिक सावधान रहते हैं [illegible] और भीम का जब [illegible] आता है तो उसी के अनुरूप शब्दों का चयन किया गया है। द्रौपदी एक नारी है अतः नारी के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया गया है -

"शठे शाठ्यं समाचरेत्।"

द्रौपदी कहती है दुर्जन के साथ सदा दुर्जनता का व्यवहार करना चाहिए, यदि दुर्जन के साथ सज्जनता का व्यवहार किया जाय तो वह कमजोर समझ लेता है।

उपर्युक्त सन्दर्भ के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि महाकवि भारवि भाषा-भाव-अर्थ-पदलालित्य के धनी हैं तभी तो इनके सन्दर्भ में कहा गया है- 'भारवेरर्थगौरवम्।'

PANINI CLASSES